

आत्माका स्व-परप्रकाश (१)

भारतमें दार्शनिकोंकी चिन्ताका मुख्य और अन्तिम विषय आत्मा ही रहा है। अन्य सभी चीजें आत्माकी खोजमेंसे ही फलित हुई हैं। अतएव आत्माके अस्तित्व तथा स्वरूपके संबन्धमें विलकुल परस्पर विरोधी ऐसे अनेक मत अति चिरकालसे दर्शनशास्त्रोंमें पाये जाते हैं। उपनिषद् कालके पहिले ही से आत्माको सर्वथा नित्य—कूटस्थ—माननेवाले दर्शन पाये जाते हैं जो औपनिषद्, सांख्य आदि नामसे प्रसिद्ध हैं। आत्मा अर्थात् चित्त या नाम को भी सर्वथा क्षणिक माननेका बौद्ध सिद्धान्त है जो गौतम बुद्धसे तो अर्वाचीन नहीं है। इन सर्वथा नित्यत्व और सर्वथा क्षणिकत्व स्वरूप दो एकान्तोंके बीच होकर चलनेवाला अर्थात् उक्त दो एकान्तोंके समन्वयका पुरस्कर्ता नित्यानित्यत्ववाद आत्माके विषयमें भी भगवान् महावीरके द्वारा स्पष्टतया आगमोंमें प्रतिपादित (भग० श० ७. उ० २.) देखा जाता है। इस जैनाभिमत आत्मनित्यानित्यत्ववादका समर्थन मीमांसकधुरीण कुमारिल ने (श्लोकवा० आत्म० श्लो० २८ से) भी बड़ी स्पष्टता एवं तार्किकतासे किया है जैसा कि जैनतार्किकग्रन्थोंमें भी देखा जाता है। इस बारेमें यद्यपि आ० हेमचन्द्रने जैनमतकी पुष्टिमें तत्त्वसंग्रहगत श्लोकोंका ही अक्षरशः अवतरण दिया है तथापि वे श्लोक वस्तुतः कुमारिलके श्लोकवार्तिकगत श्लोकोंके ही सार मात्रके निर्देशक होनेसे मीमांसकमतके ही द्योतक हैं।

ज्ञान एवं आत्मामें स्वावभासित्व-परावभासित्व विषयक विचारके बीज तो श्रुतिश्रागमकालीन साहित्य^१ में भी पाये जाते हैं पर इन विचारों का स्पष्टीकरण एवं समर्थन तो विशेषकर तर्कयुगमें ही हुआ है। परोक्षज्ञानवादी कुमारिल आदि मीमांसकके मतानुसार ही ज्ञान और उससे अभिन्न आत्मा इन दोनों का परोक्षत्व अर्थात् मात्र परावभासित्व सिद्ध होता है। योगाचार बौद्धके मतानुसार विशानवाह्य किसी चीजका अस्तित्व न होनेसे और विशान स्वसंविदित होनेसे ज्ञान और तद्रूप आत्माका मात्र स्वावभासित्व फलित होता है। इस बारेमें भी

१. 'तस्य भासा सर्वमिदं विभाति । तमेव भान्तमनुभाति सर्वम् ॥'

—कठो० ५.१५ ।

जैनदर्शनने अपनी अनेकान्त प्रकृतिके अनुसार ही अपना मत स्थिर किया है। शान एवं आत्मा दोनोंको स्पष्ट रूपसे स्व-परामासी कहनेवाले जैनाचार्योंमें सबसे पहिले सिद्धसेन ही हैं (न्याया० ३१)। आ० हेमचन्द्रने सिद्धसेनके ही कथनको दोहराया है।

देवसूरिने आत्माके स्वरूपका प्रतिपादन करते हुए जो मतान्तरव्यावर्त्तक अनेक विशेषण दिये हैं (प्रमाणन० ७.५४, ५५) उनमें एक विशेषण देह-व्यापित्व यह भी है। आ० हेमचन्द्रने जैनाभिमत आत्माके स्वरूपको सूत्रबद्ध करते हुए भी उस विशेषणका उपादान नहीं किया। इस विशेषणत्यागसे आत्मपरिमाणके विषयमें (जैसे नित्यानित्यत्व विषयमें है वैसे) कुमारिलके मतके साथ जैन मतकी एकताकी भ्रान्ति न हो इसलिए आ० हेमचन्द्रने स्पष्ट ही कह दिया है कि देहव्यापित्व इष्ट है पर अन्य जैनाचार्योंकी तरह सूत्रमें उसका निर्देश इसलिए नहीं किया है कि वह प्रस्तुतमें उपयोगी नहीं है।

ई० १६३६]

[प्रमाण मीमांसा